ए.

एन. राजेंद्रन

बनाम

एस. वैली

(2012 की सिविल अपील सं. 3293)

बी.

फरवरी 03,2022

[के. एम. जोसेफ और हृषिकेश रॉय, जे. जे.]

हिंदू विवाह अधिनियम, 1955।13(1)(आई. ए.), 15-परिवार न्यायालय अधिनियम, 1984-एस.19, 20 – सीमा अधिनियम, 1963 -धारा 29-क्रूरता-विवाह का अपरिवर्तनीय विघटन-विवाह का विघटन-अपीलार्थी का मामला कि प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी को छोड़ दिया और अपने माता-पिता के घर लौट आया-क्रूरता के आधार पर अपीलार्थी द्वारा तलाक याचिका-परिवार न्यायालय ने तलाक याचिका की अनुमति दी-प्रत्यर्थी ने उच्च न्यायालय के समक्ष परिवार न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 19 के तहत अपील दायर की-अपीलार्थी ने तर्क दिया कि अपील दायर करने का समय समाप्त हो गया था और इसलिए उसने विवाह के विघटन की डिक्री के बल पर फिर से शादी कर ली थी-प्रत्यर्थी ने बाद में वैवाहिक अधिकारों की बहाली के लिए एक याचिका दायर की।9 हिंदू विवाह अधिनियम, जो अभी भी लंबित था-उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच विवाह के विघटन के आदेश को यह मानते हुए उलट दिया कि कोई क्रूरता नहीं थी-अपील पर अभिनिर्धारित किया गयाःअपीलार्थी न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करने के लिए राजी करने में विफल रहा कि अपील निर्धारित अवधि के भीतर दायर नहीं की गई थी।19 परिवार न्यायालय अधिनियम-अपीलार्थी का दूसरा विवाह एस के अधिदेश का उल्लंघन करते हुए हुआ।15 हिंदू विवाह अधिनियम-उच्च न्यायालय का अपना निष्कर्ष सही था-कोई क्रूरता नहीं थी-अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच मेलजोल की कोई संभावना नहीं थी-अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच विवाह मृत है-संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत शक्ति का प्रयोग करते हुए, अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच विवाह को विघटित घोषित किया गया।

सी.

डी.

ई.

एफ.

अपील का निपटारा करते हुए, न्यायालय ने

जी.

यह अभिनिर्धारित किया कि **-1.** पारिवारिक न्यायालय **(**प्रक्रिया**)** नियम**, 1996** के नियम **52** के अवलोकन पर।यह स्पष्ट रूप से अपीलार्थी के इस तर्क को पीछे हटाने के लिए पर्याप्त होगा कि एक अपील तीस दिनों के भीतर रखी जा सकती है**,** भले ही वह प्रमाणित प्रति के अभाव में हो।अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता के तर्कों पर आगे आते हुए कि धारा **19** सिविल संहिता के प्रावधानों को ओवरराइड करती है

एच.

498 ए.

499

एन. राजेंद्रन बनाम एस. वली ए

प्रक्रिया और निर्णय की प्रमाणित प्रति की कोई आवश्यकता नहीं हो सकती है**,** यह न्यायालय मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा उसी अधिनियम की उक्त धारा **21** अर्थात् परिवार न्यायालय अधिनियम के तहत बनाए गए नियम **52** के संबंध में इस तर्क को स्पष्ट रूप से असमर्थनीय मानता है। धारा **19** में गैर**-**अस्थाई खंड का वास्तव में एक अलग उद्देश्य और दायरा है और इसका उद्देश्य अपील को बनाए रखने के लिए कानून में मौजूद सभी आवश्यकताओं को समाप्त करना नहीं था।**[**पैरा **23] [515-**सी**-**डी**]**

बी.

2. समान रूप से**,** अधिनियम की धारा **19 (3)** के आधार पर अपीलार्थी का तर्क बिना किसी सार के है। इसने सीमा अधिनियम की धारा **29 (2)** के अर्थ के भीतर एक विशेष कानून का गठन किया। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि परिवार न्यायालय अधिनियम स्वयं इस भारी अहसास पर आधारित था कि एक विशेष संस्थान जिसे पक्षों के बीच सुलह के प्रयासों का तेजी से सहारा लेना चाहिए**,** की स्थापना की जानी चाहिए।यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि अधिनियम की घोषणा के साथ भी**,** जब तक कि एक परिवार न्यायालय की स्थापना नहीं की जाती है**,** तब तक उन न्यायालयों का अधिकार क्षेत्र बना रहेगा जो पहले प्रावधानों से निपट रहे थे।परिवार न्यायालय की स्थापना और अधिनियम की धारा **7** के तहत अधिकारिता का प्रयोग करने के साथ**,** इस न्यायालय का विचार है कि परिवार न्यायालय अधिनियम को

संज्ञानात्मक अधिनियमों के साथ पढ़ा जाना चाहिए।दूसरे शब्दों में, परिवार न्यायालय अधिनियम एक स्वतंत्र अधिनियम नहीं है। यह हिंदू विवाह अधिनियम जैसे अधिनियमों से निर्वाह प्राप्त करता है। यही कारण है कि उदाहरण के लिए, भारत में परिवार न्यायालय की स्थापना के बाद हिंदू विवाह अधिनियम के अर्थ के भीतर एक याचिका पर हिंदू विवाह अधिनियम के तहत प्रदान किए गए आधारों पर परिवार न्यायालय द्वारा विचार किया जाना है। वास्तव में, पारिवारिक न्यायालय अधिनियम की धारा **7** के केवल अवलोकन से पता चलता है कि यह मुकदमों और कार्यवाही के बारे में बात करता है।इसलिए, सीमा अधिनियम की धारा **29** के साथ परिवार न्यायालय अधिनियम की धारा **7** को पढ़ना, हमारे इस निष्कर्ष को भी मजबूत करता है कि धारा **29 (3)** के अर्थ के भीतर 'कार्यवाही' शब्द को मूल कार्यवाही तक ही सीमित रखा जाना है।**[**पैरा **24] [515-**ई**-**एच**; 516-**ए**]**

सी.

डी.

ई.

एफ.

जी.

3. यह न्यायालय भी धारा **20** के आधार पर विवाद में कोई योग्यता नहीं पाता है।धारा **20** परिवार न्यायालय अधिनियम को किसी भी चीज के बावजूद, जो किसी अन्य अधिनियम के साथ असंगत है, प्रबल प्रभाव देती है। यह सच है कि इसका उद्देश्य अन्य प्रावधानों पर भी भारी प्रभाव डालना है।लेकिन इसमें

एच.

धारा **20** को लागू करने और सीमा अधिनियम की धारा **12** को खारिज करने के लिए, अपीलार्थी को सीमा अधिनियम की धारा **29 (2)** के आवेदन को समाप्त करने में पहले स्थान पर सफल होना चाहिए। एक बार धारा **29 (2)** लागू होने के बाद, परिवार न्यायालय अधिनियम एक विशेष अधिनियम होगा जो धारा **19** में अनुध्यात सीमा की विशेष अवधि के लिए प्रावधान करेगा, लेकिन सीमा अधिनियम की धारा **4** से **24** के प्रावधानों को लागू करेगा। सीमा अधिनियम की धारा **12** संभावित अपीलार्थी के लिए वैध रूप से उपलब्ध है। यह न्याय के हित के लिए भी अनुकूल है।वास्तव में, यह समझ से परे है कि कैसे एक ओर, कानून नियमों के नियम **52** के माध्यम से आदेश देता है कि एक प्रमाणित प्रति एक अपील के साथ होनी चाहिए, और फिर भी विवाह को भंग करने की घोषणा करने वाला निर्णय वादी को फिरौती के लिए पकड़ सकता है, जब उसे प्रमाणित प्रति के बिना अपील दायर करने का कोई

अधिकार नहीं है, और फिर भी मूल न्यायालय के समक्ष एक सफल पक्ष को सीमा अधिनियम के तहत अवधि समाप्त होने से पहले पुनर्विवाह करने के लिए स्वतंत्र छोड़ दिया जाता है। **[**पैरा **25] [516-**बी**-**ई**]**

बी.

सी.

4. इस प्रकार परिवार न्यायालय अधिनियम की धारा **19** के साथ सीमा अधिनियम की धारा **29 (2)** सहपठित धारा **12** में कुछ भी असंगत नहीं है। इसलिए, अपीलार्थी के इस तर्क में कोई दम नहीं है कि धारा **20** के प्रावधान सीमा अधिनियम की धारा **12** के प्रावधानों को ओवरराइड करेंगे जिससे प्रत्यर्थी द्वारा दायर अपील समय से परे हो जाएगी।**[**पैरा **26] [516-**ई**-**एफ**]**

डी.

ई.

5. 09.09.2004 पर दायर की जाने वाली अपील को अधिनियम की धारा **15** के अर्थ के भीतर प्रस्तुत किया गया माना जाना चाहिए। चर्चा का परिणाम यह है कि अपीलार्थी ने गुण-दोष के आधार पर निष्कर्षों को पलटने का मामला नहीं बनाया है।समान रूप से, जैसा कि अपीलकर्ता हमें यह अभिनिर्धारित करने के लिए राजी करने में विफल रहा कि अपील परिवार न्यायालय अधिनियम की धारा **19** में निर्धारित अवधि के भीतर दायर नहीं की गई थी या कि अपील समय के भीतर धारा **15** की अवधि के दौरान प्रस्तुत नहीं की गई थी, दूसरा विवाह जिस पर अपीलार्थी द्वारा भरोसा किया जाता है, स्पष्ट रूप से हिंदू विवाह अधिनियम की धारा **15** के अधिदेश के **33** उल्लंघन में हुआ था और इस न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करने में कोई संकोच नहीं है कि उच्च न्यायालय अपने निष्कर्षों में पूरी तरह से सही था।**[**पैरा **27] [517-**बी**-**डी**]**

एफ.

जी.

6. उक्त विवाह में एक बच्चे का जन्म होता है।इसमें कोई संदेह नहीं है कि धारा **15** का उल्लंघन होने के कारण, यह एक उचित परिपूर्ति बन जाती है लेकिन ए

एच.

उसी समय हम अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के पति और पत्नी के रूप में सहवास करने की किसी भी संभावना को उचित रूप से नहीं समझते हैं।विवाह में जो कुछ भी जीवन था, वह समय के साथ समाप्त हो गया है, नई पार्टियों की उपस्थिति और पार्टियों के बीच किसी भी बंधन का गायब होना।अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच मेल-मिलाप की थोड़ी सी भी संभावना उन कारणों से मौजूद नहीं है जो पूरी तरह से अपीलार्थी के कार्यों के कारण हैं और जिनके लिए प्रत्यर्थी को दोषी नहीं ठहराया जा सकता है।अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच विवाह समाप्त हो गया है।इसे वापस न आने के बिंदु के रूप में वर्णित किया जा सकता है।अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के किसी भी प्रकार के उचित संबंध को एक साथ जोड़ने की कोई संभावना नहीं है क्योंकि पक्षों के बीच संबंध सुधार से परे टूट गया है और इस मामले के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, यह न्यायालय सोचेगा कि यह न्याय के हित में होगा और पक्षों के साथ पूर्ण न्याय करने के लिए कि इस न्यायालय को अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच विवाह को भंग करने का आदेश पारित करना चाहिए।**[**पैरा **32] [520-**डी**-**जी**]**

बी.

सी.

डी.

लता कामत बनाम विलास (1989) 2 एससीसी 613:[1989] 2 एससीआर

137; आर**.** श्रीनिवास कुमार बनाम आर**.** शमिता **(2019) 9** एससीसी

409 :[2019] 12 एस. सी. आर. 873; मुनीश कक्कड़ बनाम निधि कक्कड़ (2020) 14 एस. सी. सी. 657:[2019] 15 एससीआर 169;

शिवशंकरन बनाम संथिमीनल **(2021)** एस**.** सी**.** सी**.** ऑनलाइन एससी

ई.

702 - संदर्भित किया गया।

केनरा बैंक, बॉम्बे बनाम वार्डन इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड (1952) बम 1083; विद्याचरण शुक्ला बनाम खुबचंद

(1964) एयर 1099:[1964] एस. सी. आर. 6 129; श्रीमती. सिप्रा डे बनाम अजीत कुमार डे ए. आई. आर. 1988 ए. आई. आर. 28; कुट्टिमलु बनाम।

एफ.

सुब्रमण्यन (1981) के. एल. टी. 602; कुन्नारथ येसोदा बनाम मनाथनाथ नारायणन ए. आई. आर. 1985 केर 220; चंदर

देव बनाम रानी बाला ए. आई. आर 1979 दिल्ली 22-संदर्भित।संदर्भित निर्णय

[1989] 2 एससीआर **137**

संदर्भित किया गया है

पैरा **19**

जी.

[1964] 6 एससीआर **129**

संदर्भित किया गया है

पैरा **19**

[2019] 15 एससीआर **169**

संदर्भित किया गया है

पैरा **30**

एच.

सिविल अपीलीय न्यायनिर्णयः2012 की सिविल अपील सं. 3293।

2004 के सी. एम. ए. सं. 3352 में मद्रास में उच्च न्यायालय के न्यायिक निर्णय और आदेश दिनांक 12.02.2010 से।

के. एस. महादेवन, सुश्री स्वाति बंसल, वरुण मुद्गल, रंगराजन आर., राजेश कुमार, अधिवक्तागण अपीलार्थी के लिए।

बी.

गौतम नारायण, सुश्री अस्मितासिंह, अधिवक्तागण प्रत्यर्थी के लिए।न्यायालय का निर्णय इसके द्वारा दिया गया था

के**.** एम**.** जोसेफ**,** जे**.**

सी.

1. विवादित निर्णय द्वारा, उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच विवाह के विघटन के आदेश को उलट दिया है जो हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13 (1) (आई. ए.) के तहत पारित किया गया है।

2. हमने अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री के. एस. महादेवन और प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री गौतम नारायण को सुना है।3. अपीलार्थी और प्रत्यर्थी का विवाह 29.08.1999 पर हिंदू संस्कारों और रीति-रिवाजों के अनुसार किया गया था।अपीलार्थी के अनुसार, उसकी बहन और प्रतिवादी के भाई के बीच कुछ मतभेद थे, जो एक-दूसरे से विवाहित थे, जिसके कारण अपीलार्थी की बहन अपने माता-पिता के घर लौट आई।इसके अलावा, अपीलार्थी का मामला यह है कि प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी को 18.01.2000 पर छोड़ दिया और अपने माता-पिता के घर लौट आया।वह घर नहीं लौटी।उन पर क्रूरता का आरोप लगाया गया और तदनुसार, तलाक की याचिका 05.03.2001 पर दायर की गई थी जिसमें विघटन की मांग की गई थी।पारिवारिक न्यायालय ने अपनी तारीख 23.07.2004 की डिक्री द्वारा याचिका को स्वीकार कर लिया।परिवार न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 19 के तहत मद्रास उच्च न्यायालय के समक्ष प्रत्यर्थी द्वारा एक अपील की गई थी और इसे 09.09.2004 पर दायर किया गया था।अपीलार्थी के अनुसार, चूंकि प्रत्यर्थी द्वारा अपील दायर करने की अवधि समाप्त हो गई थी, इसलिए उसने दिनांक 23.07.2004 के विघटन के आदेश के बल पर 31.10.2004 पर फिर से शादी कर ली।मई, 2005 में उन्हें इस मामले में नोटिस दिया गया था।वास्तव में, प्रत्यर्थी ने 27.12.2004 पर हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 9 के तहत वैवाहिक अधिकारों की बहाली की मांग करते हुए एक याचिका दायर की और वह अभी भी लंबित है।4. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री के. एस. महादेवन प्रस्तुत करेंगे कि उच्च न्यायालय ने परिवार न्यायालय के फैसले को उलटने में स्पष्ट रूप से गलती की है।वह प्रस्तुत करेगा कि यह ए का मामला है

डी.

ई.

एफ.

जी.

एच.

503

एन. राजेंद्रन बनाम एस. वल्ली [के. एम. जोसेफ, जे.] ए.

प्रत्यर्थी द्वारा की जाने वाली वैवाहिक क्रूरता। विचारण न्यायालय ने सबूतों पर विचार करने के बाद विवाह के विघटन की मंजूरी को सही ठहराने के लिए एक निष्कर्ष दिया है।यह बताया गया है

कि प्रत्यर्थी और अपीलार्थी की बहन के बीच तनावपूर्ण संबंध थे।यहाँ यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि अपीलार्थी की बहन की शादी 24.05.1999 पर प्रत्यर्थी के भाई से हुई थी, अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच 29.08.1999 पर शादी से पहले।यह इंगित किया गया है कि साक्ष्य पर, निचली विचारण न्यायालय द्वारा निष्कर्ष दिया गया था कि प्रत्यर्थी और अपीलार्थी की बहन के बीच तनाव का अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच संबंधों पर स्पष्ट प्रभाव पड़ा था। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि प्रत्यर्थी आत्महत्या करने की धमकी देगा। इसके अलावा, अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता आगे तर्क देंगे कि हालाँकि अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी से वापस आने का अनुरोध किया था।लेकिन उसने यह कहते हुए मना कर दिया कि इस तथ्य को देखते हुए कि वह एक बच्चे को जन्म देने गई थी, उसे और समय चाहिए।उसने पाँच महीने का समय मांगा था।वास्तव में, प्रत्यर्थी के पिता का निधन 03.02.2001 पर हुआ था।यह आगे तर्क दिया जाता है कि प्रत्यर्थी का रवैया इस स्वीकृत तथ्य से परिलक्षित होता है कि प्रत्यर्थी ने वैवाहिक अधिकारों की बहाली के लिए कोई याचिका दायर नहीं की थी।यदि वह वास्तव में वापस आने और अपीलार्थी के साथ रहने में रुचि रखती, तो वह ऐसा करती।यह आगे बताया गया है कि प्रत्यर्थी और उसकी साली के बीच कोई तनावपूर्ण संबंध नहीं होने के बारे में उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निष्कर्ष अस्थिर हैं।उन्होंने इस संबंध में विवादित फैसले में विरोधाभासों की ओर इशारा किया।वह इस निष्कर्ष की तुलना करेंगे कि परिवारों के बीच तनावपूर्ण संबंध होने के निष्कर्ष के साथ ऐसा कोई तनाव नहीं था।प्रत्यर्थी कभी भी अपीलार्थी के साथ रहने को तैयार नहीं था।उच्च न्यायालय के इस निष्कर्ष की कि प्रत्यर्थी हमेशा तैयार था और फिर से शामिल होने के लिए तैयार था, तथ्यों पर अस्थिर होने के रूप में आलोचना की जाती है।इस संबंध में यह इंगित किया गया है कि लौटने का इरादा अभिवचनों में परिलक्षित नहीं हुआ था, और यह पहली बार केवल प्रत्यर्थी के साक्ष्य में अभिव्यक्ति पाता है।

बी.

सी.

डी.

ई.

एफ.

5. यह आगे तर्क दिया जाता है कि प्रत्यर्थी द्वारा अपने साथ सभी रत्न और सामान ले जाने के प्रभाव के बारे में उच्च न्यायालय का निष्कर्ष, जिस पर परिवार न्यायालय ने यह पता लगाने के लिए भरोसा किया था कि प्रत्यर्थी अपीलार्थी के साथ रहने में रुचि नहीं रखता था, इस आधार पर कायम नहीं रखा जा सकता है कि यह अटकलबाजी है और उच्च न्यायालय का निष्कर्ष इसके समर्थन में किसी भी सबूत से रहित है।दो विचार संभव होने के कारण, यह तर्क दिया जाता है कि उच्च न्यायालय को विचारण न्यायालय के दृष्टिकोण को उलट नहीं देना चाहिए था।यह आगे तर्क दिया जाता है कि अपीलार्थी और प्रत्यर्थी ने

जी.

एच.

18.01.2000 के बाद से अलग रह रहे हैं।22 बरसों बीत गए।एक लंबा और निरंतर अलगाव, विवाह आज तक केवल एक कानूनी कल्पना है।यह मरम्मत से परे एक बंधन है, पूरा सबस्ट्रेटम वाष्पित हो गया है।विवाह की पवित्रता खो जाती है।इसलिए यह तर्क दिया जाता है कि उच्च न्यायालय के फैसले को पलट दिया जाना चाहिए।इसके बाद, यह तर्क दिया जाता है कि धारा 19 के तहत प्रत्यर्थी द्वारा दायर अपील स्पष्ट रूप से समय से परे थी।यह इंगित किया गया है कि जब उच्च न्यायालय ने इस तर्क को खारिज कर दिया है कि डिक्री के खिलाफ अपील करने के लिए 90 दिनों की अवधि उपलब्ध है, तो उसने यह निष्कर्ष निकालने में गलती की है कि अपील सीमा अधिनियम की धारा 12 के प्रावधानों के तहत समय के भीतर दायर की गई थी।

बी.

विद्वान अधिवक्ता यह तर्क देंगे कि निष्कर्ष सीमा अधिनियम की धारा 29 (3) के अंतर्गत आता है। उन्होंने आगे बताया कि परिवार न्यायालय अधिनियम की धारा 19 अपने आप में एक संहिता है और यह धारा 20 से स्पष्ट है जो घोषणा करती है कि धारा 20 किसी भी अन्य कानून के साथ असंगत होने के बावजूद प्रभावी होगी।वह इस संबंध में आगे तर्क देंगे कि धारा 19 (1) में विचार किया गया है कि सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधान परिवार न्यायालय अधिनियम की धारा 19 के भारी संचालन के रास्ते में नहीं खड़े होंगे। दूसरे शब्दों में, उनका तर्क है कि सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत आने वाले मामले में, यह अनिवार्य है कि अपील के साथ एक प्रमाणित प्रति होनी चाहिए, लेकिन जब धारा 19 (1) की उचित रूप से सराहना की जाती है, तो इस आवश्यकता को हटा लिया गया माना जाना चाहिए।समान रूप से, वह यह तर्क देने के लिए धारा 19 (1) पर ध्यान देता है कि परिवार न्यायालय अधिनियम के प्रावधान किसी भी अन्य कानून के विपरीत होने के बावजूद प्रभावी होंगे।इस प्रकार, संभावित अपीलार्थी द्वारा धारा 19 में 30 दिनों की अवधि का पालन किया जाना चाहिए।अतः, अपीलार्थी परिसीमा अधिनियम की सहायता से किसी भी अवधि को बाहर करने का अधिकार नहीं है। वह तर्क देंगे कि उच्च न्यायालय ने सीमा अधिनियम की धारा 29 (2) पर गलत तरीके से भरोसा किया है। यह विवाह और तलाक से संबंधित एक कानून होने के नाते, यह पूरी तरह से धारा 29 (3) की चार दीवारों के भीतर आता है।इस संबंध में, वह तर्क देंगे कि हालांकि धारा 19 के तहत उच्च न्यायालय के समक्ष अपील एक मुकदमा नहीं है, यह निश्चित रूप से धारा 29 (3) के अर्थ के भीतर एक कार्यवाही होगी।वह प्रस्तुत करेंगे कि लता कामत बनाम विलास 1 आदि में रिपोर्ट

किया गया इस न्यायालय का निर्णय एक ऐसा मामला था जिस पर हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 28 के तहत विचार किया जाना था। परिवार न्यायालय अधिनियम के प्रावधानों में स्पष्ट मतभेदों को ध्यान में रखते हुए, विशेष रूप से, धारा 19 और 20, धारा 29 (3) में 'कार्यवाही' शब्द

सी.

डी.

ई.

एफ.

जी.

1 1989 (2) एससीसी 613 ए

एच.

505

एन. राजेंद्रन बनाम एस. वाली [के. एम. जोसेफ, जे.] ए.

इसमें एक अपील शामिल होगी जो धारा 19 के तहत की जाती है।इसके बाद वह तर्क देंगे कि हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 15 के तहत, अपील समय पर प्रस्तुत की जानी चाहिए।श्री के. एस. महादेवन, एल. डी. के अनुसार "प्रस्तुत" शब्द। वकील को पांडित्यपूर्ण तरीके से व्याख्या करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है और इसे केवल न्यायालय की फाइलों में अपील को आगे बढ़ाने के रूप में नहीं समझा जाना चाहिए।दूसरे शब्दों में, एक अपील को धारा 15 के अर्थ के भीतर "प्रस्तुत" के रूप में तभी माना जाएगा जब इसे न केवल दायर किया जाता है, बल्कि न्यायिक पक्ष में न्यायालय के समक्ष आगे बढ़ाया और लाया जाता है।हालाँकि अपील 09.09.2004 पर दायर की गई थी, लेकिन यह बताया गया है कि डिक्री पर रोक लगाने के लिए आवेदन पर 30.08.2004 पर हस्ताक्षर किए गए थे।अपील तैयार रखी गई थी और इसे जानबूझकर तुरंत दायर नहीं किया गया था।जिस क्षण प्रत्यर्थी को पता चला कि अपीलार्थी ने 30.01.2004 पर फिर से शादी कर ली है, उसने 01.11.2004 पर रोक लगाने के लिए एक आवेदन दायर किया।इसलिए, वह जानबूझकर जानना चाहती थी कि क्या अपीलार्थी फिर से शादी करेगा।इसके बाद, उन्होंने 18.11.2004 पर रुकने के लिए आवेदन दिया, और उक्त तिथि पर रोक प्राप्त की।इसलिए, यह तर्क दिया जाता है कि यह निर्धारित करना असंभव है कि एक पक्ष जो एक डिक्री का सामना करता है, उसके अपील दायर करने की संभावना कब है।यह प्रत्यर्थी का आचरण है जिस पर यह तर्क दिया जाता है कि उसे कोई राहत नहीं दी जा सकती है।

बी.

सी.

डी.

6. इसके विपरीत, प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री गौतम नारायण इंगित करेंगे कि अपीलार्थी के लिए विवाह विच्छेद की मांग करने के लिए किसी भी समय कोई मामला नहीं बनाया गया था। शादी के बाद, यह पाते हुए कि वह गर्भवती थी, और स्वाभाविक रूप से, वह अपने माता-पिता के घर चली गई।गर्भावस्था एक सहज मामला नहीं था।यह वास्तव में जटिल था।उसके पिता का निधन हो गया।उसके नियंत्रण से परे की परिस्थितियों ने उसे अपने माता-पिता के घर में रहने के लिए विवश कर दिया और इसका वैवाहिक बंधन के तहत अपने दायित्वों को पूरा करने के लिए प्रत्यर्थी की ओर से झुकाव की कमी से कोई लेना-देना नहीं है।यह इंगित किया गया है कि परिवार न्यायालय के पक्ष में आने वाले आरोप स्पष्ट रूप से एक मानक के नहीं हैं, जो कानून देने वाले द्वारा विचार की गई क्रूरता के आधार को आकर्षित करेंगे।परिवार न्यायालय द्वारा विघटन की डिक्री देने के लिए कोई आधार मौजूद नहीं था।यह बताया गया है कि उच्च न्यायालय ने परिस्थितियों के संदर्भ में मामले पर विस्तृत चर्चा की है और सही निष्कर्ष पर पहुंचा है कि कोई क्रूरता नहीं है।प्रत्यर्थी पूरी तरह से निर्दोष है।वह एक शिक्षिका हैं।शादी में एक बेटा है।यह इंगित किया गया है कि अपीलार्थी ने अपने बेटे में कोई रुचि नहीं ली है।वह इंगित करेंगे कि जहाँ तक सीमा अधिनियम की धारा 29 (3) की प्रयोज्यता से संबंधित प्रश्न का संबंध है, परिवार न्यायालय अधिनियम की धारा 19 के अंतर्गत एक विशेष प्रावधान है -

ई.

एफ.

जी.

एच.

धारा 29 (2) का अर्थ और इसलिए यह धारा 29 (2) है जो लागू होगी।वह इंगित करेंगे कि धारा 29 (3) में 'कार्यवाही' शब्द एक मुकदमे के समान कार्यवाही तक ही सीमित होना चाहिए, जिसका अर्थ है कि पक्षों द्वारा लाई गई मूल कार्यवाही और मामले में की गई अपील नहीं।7. वह यह भी तर्क देंगे कि हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 15 में "प्रस्तुत" शब्द पर रखी जाने वाली व्याख्या के बारे में विवाद में कोई योग्यता नहीं है। वह आगे बताएगा कि न्यायालय तथ्यों और प्रत्यर्थी की दुर्दशा पर ध्यान दे सकता है, जो निर्दोष है, लेकिन उस अपवित्र जल्दबाजी के लिए जिसके साथ उसका पति शादी में जल्दबाजी कर रहा है।

बी.

8. जहाँ तक अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता के इस तर्क का संबंध है कि उच्च न्यायालय ने परिवार न्यायालय की डिक्री को उलटने के मामले में गलती की है, हमारा विचार है कि विवाद में कोई दम नहीं है।निस्संदेह, विवाह को अल्पकालिक के रूप में वर्णित करने से अपीलार्थी को दोष के सही हिस्से से मुक्ति नहीं मिलेगी जो उसके कंधों पर पड़ता है।शादी 29.09.1999 पर हुई थी।गर्भवती होने के बाद, प्रत्यर्थी 18.01.2000 पर अपने वैवाहिक घर के लिए रवाना हो गई।बच्चे का जन्म 29.08.2000 पर हुआ था।प्रत्यर्थी के पिता की फरवरी, 2001 में मृत्यु हो गई।

सी.

डी.

9. अपीलार्थी ने जिस जल्दबाजी में कार्यवाही शुरू की है, वह इस तथ्य से स्पष्ट है कि अपीलार्थी ने 05.03.2001 पर परिवार न्यायालय के समक्ष याचिका दायर की है।दूसरे शब्दों में, याचिका विवाह की तारीख से दो साल से कम की अवधि के भीतर दायर की जाती है।क्रूरता, निस्संदेह, शारीरिक और मानसिक क्रूरता भी हो सकती है।यह प्रत्येक मामले के तथ्यों पर तय किया जाने वाला मामला है।लेकिन हमारा स्पष्ट मत है कि किसी भी आधार पर अपीलार्थी द्वारा किया जाने वाला मामला बिना किसी आधार के था।इस मामले में साक्ष्य में अपीलार्थी पीडब्लू-1 की मौखिक गवाही शामिल थी, और प्रत्यर्थी की मौखिक गवाही आरडब्ल्यू-1 है।इसके अलावा, ए-1 और ए-2, जैसे कि प्रत्यर्थी के खिलाफ कथित क्रूरता पर कोई प्रकाश नहीं डालते हैं।उच्च न्यायालय ने स्पष्ट रूप से पाया है कि क्रूरता के आरोप में कोई आधार नहीं था, जो हमारे सामने दोहराया गया है, प्रत्यर्थी और अपीलार्थी की बहन के बीच तथाकथित तनावपूर्ण संबंध में शामिल है।उच्च न्यायालय ने ठीक ही कहा कि अपीलार्थी की बहन की शादी की तारीख को ध्यान में रखते हुए, जो अपीलार्थी की शादी से पहले की है, यह ऐसा मामला नहीं हो सकता है जहां उनके बीच तनाव था, क्योंकि ऐसे मामले में, प्रत्यर्थी और अपीलार्थी के बीच शादी नहीं हुई होगी।एक तनावपूर्ण संबंध का मामला बनाना ए

ई.

एफ.

जी.

एच.

अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच क्रूरता के आधार के रूप में हमारी समझ से परे है।अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता से हमारे इस प्रश्न पर कि क्या कोई अन्य परिस्थितियाँ या क्रूरता के उदाहरण हैं, अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने आत्महत्या करने की धमकी और वापस आने से इनकार करने के अलावा, क्रूरता के किसी अन्य विशिष्ट उदाहरण की ओर इशारा करने में असमर्थ रहे।जहां तक प्रत्यर्थी के वापस नहीं आने का संबंध है, यह बिल्कुल स्पष्ट है कि प्रत्यर्थी गर्भवती होने के कारण उसे अपने माता-पिता के घर जाना पड़ा।यह स्वाभाविक ही था।जैसा कि बताया गया है, गर्भावस्था सहज नहीं थी।यदि पत्नी ने बच्चे के जन्म के बाद अपने माता-पिता के घर में कुछ और समय रहने का फैसला किया है, तो यह हमारी समझ से परे है कि इस तरह के मामले को न्यायालय के समक्ष कैसे लाया जा सकता था, और इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि उचित समय की प्रतीक्षा किए बिना भी।अपीलार्थी इस तथ्य को भी ध्यान में नहीं रख रहा था कि उसने एक बच्चे को जन्म दिया था, न्यायालय में भागता है और तलाक की याचिका दायर करता है।हम 03.02.2001 पर प्रत्यर्थी के पिता की मृत्यु से अनजान नहीं हो सकते।इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, हम अपीलार्थी द्वारा इस निष्कर्ष में हस्तक्षेप करने के लिए कोई आधार नहीं देखते हैं कि अपीलार्थी द्वारा प्रत्यर्थी की ओर से कोई क्रूरता नहीं की गई है। प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता बताते हैं कि आत्महत्या करने की कथित धमकी के लिए कोई सबूत नहीं है और हमें नहीं लगता कि ऐसी कोई सामग्री है जिस पर विश्वास किया जा सके, जिसे हम सामान्य टूट-फूट के रूप में वर्णित कर सकते हैं, जो अधिकांश विवाहों के लिए सामान्य है, यदि सभी नहीं।प्रत्यर्थी द्वारा क्रूरता के आधार पर विवाह के विघटन की डिक्री को उचित ठहराने के लिए कुछ भी नहीं बनाया गया है।

बी.

सी.

डी.

ई.

10. अपीलार्थी द्वारा दिया गया अगला तर्क कि धारा 15 के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए और अपीलार्थी के आई. डी. 1 पर पुनः विवाह करने के बाद, मामले पर विचार किया जाना चाहिए और दूसरे विवाह के आलोक में निपटाया जाना चाहिए जो पूरी तरह से वैध है।अपील 09.09.2004 पर दायर की गई थी, जो परिवार न्यायालय अधिनियम की धारा 19 में निर्धारित 30 दिनों की अवधि से अधिक है। उच्च न्यायालय ने पाया है कि अपील समय के भीतर है, यह देखते हुए कि परिवार न्यायालय द्वारा 23.07.2004 पर डिक्री पारित किए जाने के बाद, प्रत्यर्थी द्वारा 31.07.2004 पर प्रमाणित प्रति के लिए आवेदन किया गया था और प्रति प्राप्त करने में खर्च की गई अवधि को बाहर रखा जाना है।जब एक प्रमाणित प्रति 19.08.2004 पर उपलब्ध कराई गई थी, तो प्रत्यर्थी ने, अपीलार्थी के अनुसार, 30.08.2004 पर ठहराव के लिए आवेदन पर हस्ताक्षर किए।अपील 01.09.2004 पर तैयार की गई थी।अपील केवल 09.09.2004 पर दायर की गई थी।इसलिए, यदि प्रमाणित

प्रति आवेदन करने और प्राप्त करने में बिताई गई अवधि को बाहर रखा जाता है, तो अपील उच्च न्यायालय द्वारा पाए गए समय के भीतर है।यदि अपीलार्थी है

एफ.

जी.

एच.

यह तर्क देते हुए कि न्यायालय प्रत्यर्थी को सीमा अधिनियम की धारा 12 के तहत आश्रय लेने की अनुमति नहीं दे सकता था, अपील समय से परे होगी और अपीलार्थी द्वारा अनुबंधित दूसरा विवाह पूरी तरह से वैध होगा।

11. अपीलार्थी के तर्क की सराहना करने के लिए, हमें हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 15 का विज्ञापन करना चाहिए।वह इस प्रकार हैः

बी.

"जब विवाह को तलाक की डिक्री द्वारा भंग कर दिया जाता है और या तो डिक्री के खिलाफ अपील करने का कोई अधिकार नहीं है या, यदि अपील करने का ऐसा अधिकार है, तो अपील करने का समय बिना अपील प्रस्तुत किए समाप्त हो गया है, या अपील प्रस्तुत की गई है लेकिन खारिज कर दी गई है, तो विवाह के किसी भी पक्ष के लिए फिर से शादी करना वैध होगा।"

सी.

12. पारिवारिक न्यायालय अधिनियम की धारा 19 पर आगे ध्यान दिया जाना चाहिए, जो इस प्रकार हैः

डी.

"(1) उप-धारा (2) में दिए गए प्रावधानों को छोड़कर और सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) या दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) या किसी अन्य कानून में कुछ भी निहित होने के बावजूद, तथ्यों और कानून दोनों पर उच्च न्यायालय के परिवार न्यायालय के प्रत्येक निर्णय या आदेश से अपील की जाएगी, जो एक अंतर्वर्ती आदेश नहीं है।

ई.

(2) पक्षकारों की सहमति से परिवार न्यायालय द्वारा पारित डिक्री या आदेश से या दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) के अध्याय IX के तहत पारित आदेश से कोई अपील नहीं होगीः

एफ.

बशर्ते कि इस उप-धारा की कोई बात उच्च न्यायालय के समक्ष लंबित किसी अपील या परिवार न्यायालय (संशोधन) अधिनियम, 1991 (1991 का 59) के प्रारंभ से पहले दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) के अध्याय IX के तहत पारित किसी आदेश पर लागू नहीं होगी।]

(3) इस धारा के तहत प्रत्येक अपील परिवार न्यायालय के निर्णय या आदेश की तारीख से तीस दिनों की अवधि के भीतर की जाएगी।

जी.

[(4) उच्च न्यायालय, अपने स्वयं के प्रस्ताव या अन्यथा, किसी भी कार्यवाही के अभिलेख की मांग और जांच कर सकता है जिसमें परिवार न्यायालय अपने अधिकार क्षेत्र में स्थित है और अध्याय ए के तहत एक आदेश पारित किया है।

एच.

509

एन. राजेंद्रन बनाम एस. वल्ली [के. एम. जोसेफ, जे.] ए.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) का IX आदेश की शुद्धता, वैधता या औचित्य के बारे में खुद को संतुष्ट करने के उद्देश्य से, जो एक अंतर्वर्ती आदेश नहीं है, और ऐसी कार्यवाही की नियमितता के बारे में।]

[(5)] उपरोक्त के अलावा, परिवार न्यायालय के किसी भी निर्णय, आदेश या डिक्री से किसी भी न्यायालय में कोई अपील या संशोधन नहीं होगा।”13. समान रूप से हमें परिवार न्यायालय अधिनियम की धारा 20 पर भी ध्यान देना चाहिए, जो इस प्रकार हैः

बी.

“इस अधिनियम के प्रावधान उस समय लागू किसी अन्य कानून में या इस अधिनियम के अलावा किसी अन्य कानून के आधार पर प्रभावी किसी भी लिखत में निहित किसी भी असंगत बात के बावजूद प्रभावी होंगे।

सी.

14. प्रावधानों का दूसरा समूह जिस पर ध्यान दिया जाना चाहिए वह सीमा अधिनियम की धारा 29 है जो निम्नानुसार हैः

“29. बचत।—(1) इस अधिनियम में कुछ भी भारतीय अनुबंध अधिनियम, 1872 (1872 का 9) की धारा 25 को प्रभावित नहीं करेगा।

डी.

(2) जहां कोई विशेष या स्थानीय कानून किसी मुकदमे, अपील या आवेदन के लिए अनुसूची द्वारा निर्धारित अवधि से अलग सीमा की अवधि निर्धारित करता है, वहां धारा 3 के प्रावधान इस तरह लागू होंगे जैसे कि ऐसी अवधि अनुसूची द्वारा निर्धारित अवधि थी और किसी विशेष या स्थानीय कानून द्वारा किसी मुकदमे, अपील या आवेदन के लिए निर्धारित सीमा की अवधि निर्धारित करने के उद्देश्य से, धारा 4 से 24 (समावेशी) में निहित प्रावधान केवल उस हद तक लागू होंगे जहां तक और जिस हद तक वे ऐसी विशेष या स्थानीय कानून द्वारा स्पष्ट रूप से बहिष्कृत नहीं हैं।

ई.

एफ.

(3) विवाह और तलाक के संबंध में कुछ समय के लिए लागू किसी कानून में अन्यथा प्रावधान किए जाने के अलावा, इस अधिनियम में कुछ भी ऐसे किसी कानून के तहत किसी मुकदमे या अन्य कार्यवाही पर लागू नहीं होगा।(4) धारा 25 और 26 और धारा 2 में "सहजता" की परिभाषा उन क्षेत्रों में उत्पन्न होने वाले मामलों पर लागू नहीं होगी जिन पर भारतीय सहजता अधिनियम, 1882 (1882 का 5) कुछ समय के लिए लागू हो सकता है।”

जी.

15. एक ओर, यह अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता का मामला है कि परिवार न्यायालय अधिनियम, यानी धारा 19, धारा 29 (3) के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए स्पष्ट रूप से लागू होगा और इसलिए, सीमा

एच.

अधिनियम लागू नहीं होगा।चूँकि सीमा अधिनियम लागू नहीं होगा, इसलिए प्रमाणित प्रति के लिए आवेदन करने और उसे प्राप्त करने में बिताई गई अवधि को प्रत्यर्थी द्वारा सीमा की अवधि की

गणना में शामिल नहीं किया जा सकता है।16. दूसरी ओर प्रत्यर्थी का विद्वान अधिवक्ता तर्क देगा कि यह धारा 29 (2) है जो लागू होगी।एक अन्य संबद्ध तर्क जिस पर हमें ध्यान देना चाहिए वह यह है कि हालाँकि 09.09.2004 पर दायर अपील को 09.09.2004 पर प्रस्तुत किया गया माना नहीं जा सकता है।17. सीमा अधिनियम, 1908 के तहत अपने पूर्व अवतार में धारा 29 (3) इस प्रकार हैः

बी.

“(3) इस अधिनियम में कुछ भी भारतीय तलाक अधिनियम (1869 का 4) के तहत मुकदमों पर लागू नहीं होगा।”

सी.

18. इसका मतलब था कि कोई सीमा अवधि नहीं है, और यह कि सीमा अधिनियम भारतीय तलाक अधिनियम, 1869 के तहत तलाक के मुकदमे पर लागू नहीं होता है।सीमा अधिनियम, 1908 पर विधि आयोग की तीसरी रिपोर्ट में परिवर्तन की आवश्यकता के बारे में कहा गया था।

डी.

“पैरा 60.उप-धारा (3) इस अधिनियम को तलाक अधिनियम, 1869 के तहत मुकदमों पर लागू नहीं करती है।पारसी विवाह और तलाक अधिनियम और विशेष विवाह अधिनियम जैसे अन्य अधिनियम हैं, जो विवाह और तलाक से संबंधित हैं।तलाक अधिनियम, 1869 के तहत कार्यवाही को बाहर करने के कारण इन अन्य अधिनियमों के तहत कार्यवाही पर समान रूप से लागू होते हैं।हम अनुशंसा करते हैं कि वैवाहिक कारणों से संबंधित सभी अधिनियमों को शामिल करने के लिए उप-धारा को बढ़ाया जा सकता है।धारा में संशोधन का मसौदा तैयार करते समय शामिल किए जाने वाले अधिनियमों को निर्दिष्ट किया जा सकता है।

ई.

19. यह प्रश्न कि क्या सीमा अधिनियम वैवाहिक कानूनों के तहत किसी अपील पर लागू होगा, समग्र नहीं है।निस्संदेह, हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 28 के तत्वावधान में, लता कामत (ऊपर) में रिपोर्ट किए गए इस न्यायालय के निर्णय में, हमें केवल निम्नलिखित अनुच्छेद पर ध्यान देने की आवश्यकता हैः

एफ.

“12.सीमा अधिनियम की अनुसूची में हिंदू विवाह अधिनियम के तहत अपील का प्रावधान नहीं है, लेकिन यह केवल हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 28 की उप-धारा (4) में प्रदान किया गया है। इस प्रकार धारा 28 की उप-धारा (4) में दी गई सीमा सीमा अधिनियम की अनुसूची से अलग है। धारा 29 की उप-धारा (2) के अनुसार, धारा 4 से 24 में निहित प्रावधान तब तक लागू होंगे जब तक कि उन्हें स्पष्ट रूप से बाहर नहीं किया जाता है।यह स्पष्ट है कि ए

जी.

एच.

511

एन. राजेंद्रन बनाम एस. वल्ली [के. एम. जोसेफ, जे.] ए.

अधिनियम के प्रावधान सीमा अधिनियम की धारा 4 से 24 के प्रावधानों के संचालन को बाहर नहीं करते हैं और इसलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि ये प्रावधान लागू नहीं होंगे।इसलिए यह स्पष्ट है कि हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 28 के तहत अपील के लिए, धारा 12 की उप-धारा (2) में निहित प्रावधान लागू होंगे, इसलिए अपील के लिए सीमा की अवधि की गणना करने के लिए निर्णय की प्रतियां प्राप्त करने के लिए आवश्यक समय को बाहर करना होगा।चंद्र देव चड्ढा मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय की एक खंड पीठ ने निम्नलिखित निर्णय दिया:(AIR pp. 24-25) हिंदू विवाह अधिनियम एक विशेष कानून है।यह भी स्पष्ट है कि यह "विशेष कानून" "अपील के लिए एक सीमा की अवधि" निर्धारित करता है।सीमा की अवधि 30 दिन है। यह सीमा अधिनियम, 1963 की पहली अनुसूची में निर्धारित अवधि से अलग है।लेकिन जब हम पहली अनुसूची की ओर मुड़ते हैं, तो हम पाते हैं कि हिंदू विवाह अधिनियम के तहत पारित डिक्री या आदेश के खिलाफ अपील के लिए पहली अनुसूची में कोई प्रावधान नहीं है। अब यह अभिनिर्धारित किया गया है कि सीमा अधिनियम, 1963 की धारा 29 (2) में निर्धारित "पहली अनुसूची द्वारा निर्धारित अवधि से भिन्न सीमा अवधि के प्रिस्क्रिप्शन" का परीक्षण उस मामले में भी संतुष्ट है जहां विशेष कानून और सीमा अधिनियम के बीच अंतर सीमा अधिनियम के तहत एक विशेष कार्यवाही को सीमित करने का प्रावधान करने में चूक के कारण उत्पन्न हुआ था, देखें, केनरा बैंक, बॉम्बे बनाम वार्डन इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड, बॉम्बे, ए. आई. आर. 19 बम जिसे सर्वोच्च न्यायालय ने विद्याचरण शुक्ला बनाम खुबचंद मामले में अनुमोदित किया था।

बी.

सी.

डी.

ई.

एक बार परीक्षण पूरा हो जाने के बाद एस. एस., 3,4 से 24, सीमा अधिनियम, 1963 के प्रावधान तुरंत विशेष कानून पर लागू होंगे।परिणाम यह है कि हिंदू विवाह अधिनियम के तहत पारित डिक्री या आदेश से अपील की सुनवाई करने वाली न्यायालय को सीमा अधिनियम की धारा 3 के तहत अपील को खारिज करने की शक्ति होगी यदि विशेष कानून द्वारा निर्धारित 30 दिनों की सीमा की अवधि के बाद की जाती है।इसी तरह, धारा 5 के तहत पर्याप्त कारण के लिए इसमें देरी को माफ करने की शक्ति होगी।इसी तरह, धारा 12 (2) के तहत अपील की गई

डिक्री या आदेश की प्रमाणित प्रति प्राप्त करने में बिताए गए समय को बाहर रखा जाएगा।यदि ऐसा है, तो सीमा अधिनियम की धारा 12 (2) आकर्षित होती है, और तीनों अपीलों में अपीलार्थियों डिक्री और आदेश की प्रमाणित प्रति प्राप्त करने के लिए उनके द्वारा लिए गए समय को बाहर करने के हकदार होंगे।इसलिए, अपीलें समय के भीतर की जाती हैं।

एफ.

जी.

एच.

इसी तरह का दृष्टिकोण कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा श्रीमती में लिया गया है। सिप्रा डे मामला और कांतिबाई मामले में एम. पी. उच्च न्यायालय भी।इसलिए यह स्पष्ट है कि सीमा अधिनियम के आधार पर प्रत्यर्थी के लिए विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत तर्क भी कोई सार नहीं है।"

20. हम यह भी देख सकते हैं कि इस विषय ने उच्च न्यायालय को अधिक विस्तृत आधार पर नियुक्त किया है।दिल्ली उच्च न्यायालय के फैसले के अलावा।इस न्यायालय ने कलकत्ता उच्च न्यायालय की खंड पीठ के फैसले पर भी ध्यान दिया जिसने इस मुद्दे पर व्यापक रूप से विचार किया है और

बी.

निर्णय की सूचना एस. एम. में दी गई है। सिप्रा डे बनाम अजीत कुमार डे 2.में

उक्त मामले में, न्यायालय ने उस परिवर्तन के लिए तर्क दिया है जो सीमा अधिनियम, 1963 की धारा 29 (3) के प्रावधानों में लाया गया था।

सी.

विधायिका सीमा अधिनियम, 1908 की धारा 29 (3) के प्रावधानों के अंतर्गत आने वाले व्यक्तियों के अलावा अन्य व्यक्तियों को वैवाहिक मामलों में 'कार्यवाही' शब्द के संबंध में सीमा अधिनियम से संरक्षण देना चाहती थी।1908 के अधिनियम की धारा 29 (3) के तहत संरक्षण उन लोगों के लिए उपलब्ध था जो भारतीय तलाक अधिनियम द्वारा शासित हैं। तर्क यह प्रतीत होता है कि स्वभाव से, वैवाहिक मामलों जैसे कि वैवाहिक अधिकारों की बहाली, तलाक, संरक्षकता, ऐसे मामले हैं जिनके लिए सीमा की अवधि तय करना उचित नहीं हो सकता है।यह पक्षकारों के न्याय के हित में नहीं होगा और इसलिए, समाज के हित में नहीं होगा।यह वह

सिद्धांत है जो उदाहरण के लिए, विशेष विवाह अधिनियम के तहत कार्यवाही तक विस्तारित किया गया था, जहां पक्ष विशेष विवाह अधिनियम और पारसी विवाह अधिनियम और किसी भी अन्य कानून द्वारा शासित थे जो वैवाहिक मामलों से संबंधित थे।लेकिन जब मूल कार्यवाही से अपील का प्रावधान करने की बात आती है, तो यह एक पूरी तरह से अलग प्रस्ताव है।यह पक्षों और बड़े पैमाने पर समाज के हित में है कि एक सीमा की अवधि निर्धारित की जाए जिसके भीतर न्यायिक पदानुक्रम के निचले स्तर पर न्यायालय के फैसले पर सवाल उठाया जाए।समय के संदर्भ में निश्चितता और निश्चितता होनी चाहिए और इस संबंध में यह देखा जाता है कि हमें धारा 29 (3) में "कार्यवाही" शब्द का अर्थ समझना चाहिए।

डी.

ई.

एफ.

जी.

21. धारा 29 (3) में दिए गए संदर्भ के उस टुकड़े पर विचार करने में हमें कोई कठिनाई नहीं है, और एक अलग सेटिंग में रखा गया है, शब्द

2 आकाशवाणी 1988 कलकत्ता 28 ए

एच.

513

एन. राजेंद्रन बनाम एस. वल्ली [के. एम. जोसेफ, जे.] ए.

“कार्यवाही में एक अपील शामिल हो सकती है।तथापि, धारा 29 (3) के संदर्भ में और विधान के इतिहास को ध्यान में रखते हुए, यह बिल्कुल स्पष्ट है कि विधायिका का इरादा मूल न्यायालय के समक्ष एक याचिका के माध्यम से कार्यवाही करना था जैसा कि हिंदू विवाह अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों में विचार किया गया है।इसके अलावा हम देखेंगे कि जैसा कि वास्तव में कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा निर्णय (उपरोक्त) में सही ढंग से देखा गया था, कि सीमा अधिनियम की धाराओं 3,4,5,12,13,29,30 और 31 में, अभिव्यक्ति 'अपील' का स्पष्ट रूप से उपयोग किया गया है।अधिक उपयुक्त बात यह है कि धारा 29 में ही, जो हमारे समक्ष विवाद के केंद्र में है, एक ओर धारा 29 (2) स्पष्ट रूप से 'अपील' शब्द का उपयोग करती है, जबकि जब धारा 29 (3) की बात आती है, तो विधायिका ने सावधानीपूर्वक 'कार्यवाही' शब्द का चयन किया है।कंपनी के अनुसार, "कार्यवाही" शब्द रखता है, अर्थात् एक मुकदमा, यह किसी भी अनिश्चित शब्दों में इंगित करता है कि विधायिका के दिमाग में जो था वह मूल कार्यवाही थी न कि अपीलीय कार्यवाही।वास्तव में, केरल उच्च न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश ने कुट्टिमलु बनाम सुब्रमण्यन 3 में रिपोर्ट किए गए फैसले में इस मुद्दे पर विचार विद्वान था और

इसी तरह के उनके विचारों को केरल उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा कुन्नारथ येसोदा बनाम मनाथनाथ नारायणन 4 में अनुमोदित विद्वान गया है।केरल उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ के फैसले से निम्नलिखित अनुच्छेदों पर ध्यान देना प्रासंगिक हैः

बी.

सी.

डी.

“16. दूसरा विवाद सीमा अधिनियम की धारा 29 (3) में "अन्य कार्यवाही" अभिव्यक्ति के अर्थ से संबंधित है। जैसा कि कुट्टिमलु बनाम सुब्रमण्यन 1981 केर एल. टी. 602 में उचित रूप से कहा गया हैः(ए. आई. आर. 1981 एन. ओ. सी. 221) चंद्र देव बनाम रानी बाला, ए. आई. आर. 1979 दिल्ली 22 के बाद, धारा 29 (3) के तहत वैधानिक प्रतिबंध मुकदमों और अन्य कार्यवाहियों तक सीमित है, जो दोनों मूल प्रकृति के हैं और उन अपीलों तक सीमित नहीं हैं जो एक अलग और अलग श्रेणी से संबंधित हैं।हम 1981 केर एल. टी. 602 में बालगंगाधरन नायर, जे. के तर्क और निष्कर्ष से पूरी तरह सहमत हैंः(ए. आई. आर 1981 एन. ओ. सी. 221)।

ई.

एफ.

17. इसलिए यह तर्क कि तलाक के लिए डिक्री के खिलाफ हिंदू विवाह अधिनियम के तहत अपील डिक्री की तारीख के 30 दिनों के भीतर दायर की जानी चाहिए, चाहे प्रमाणित प्रति प्राप्त की गई हो या नहीं और भले ही अपीलीय न्यायालय डिक्री पारित होने के बाद बंद हो गया हो या आदेश दिया गया हो और उससे 30 दिनों से अधिक समय तक बंद रहा हो, स्वीकार नहीं किया जा सकता है।अनुभाग

जी.

3 1981 के. एल. टी. 602 4 एयर 1985 केर 220

एच.

15 हिंदू विवाह अधिनियम केवल यह घोषणा करता है कि विवाह के किसी भी पक्ष के लिए कुछ परिस्थितियों में फिर से शादी करना वैध होगा।इससे ऐसा नहीं होता है कि तलाक की डिक्री की

तारीख से 30 दिनों की समाप्ति के बाद पुनर्विवाह का अधिकार स्वचालित रूप से सुनिश्चित हो जाता है।यदि कोई अपील प्रस्तुत की जाती है, तो उसे खारिज होने तक इंतजार करना होगा। यदि अपील करने का अधिकार है, तो प्रमाणित प्रति प्राप्त करने के लिए आवश्यक समय को ध्यान में रखते हुए अपील दायर किए बिना अपील दायर करने का समय समाप्त हो जाना चाहिए था।अपील दायर करने की अवधि समाप्त नहीं होती है यदि एक बार अपील दायर करने में देरी को माफ कर दिया जाता है।सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 10 के तहत समय की गणना जब न्यायालय या कार्यालय बंद होता है तो समय भी 30 दिनों से आगे बढ़ जाता है।इस प्रकार धारा 15, अपने चेहरे पर, इंगित करती है कि यह विधायी इरादा नहीं है कि तलाक की डिक्री के ठीक 30 दिनों के बाद पुनर्विवाह का अधिकार उत्पन्न होता है।

बी.

सी.

18. रिलायंस को हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 23 (4) पर रखा गया था जो प्रदान करता हैः—

डी.

“प्रत्येक मामले में जहां विवाह तलाक की डिक्री द्वारा भंग कर दिया जाता है, डिक्री पारित करने वाला न्यायालय प्रत्येक पक्ष को इसकी एक प्रति मुफ्त में देगा।

यह तर्क दिया गया था कि एक आवेदक मुफ्त में एक प्रति का हकदार था और इसलिए प्रमाणित प्रति प्राप्त करने में लगने वाले समय को बाहर नहीं किया जा सकता है।दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 363 (1) की ओर भी हमारा ध्यान आकर्षित किया गया, जिसके तहतः—

ई.

“जब अभियुक्त को कारावास की सजा सुनाई जाती है, तो निर्णय की एक प्रति, निर्णय की घोषणा के तुरंत बाद, उसे निःशुल्क दी जाएगी।

एफ.

हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 15 केवल आवेदक को मुफ्त में एक प्रति प्राप्त करने में सक्षम बनाती है, लेकिन वैधानिक रूप से उस समय को निर्धारित नहीं करती है जिसके दौरान प्रति वितरित की जानी है।धारा 23 (4) अपीलार्थी के इस तर्क को आगे नहीं बढ़ाती है कि प्रमाणित प्रति प्राप्त करने के लिए आवश्यक समय को बाहर नहीं किया जा सकता है।”

जी.

22. उपरोक्त पैराग्राफ 18 की सामग्री को लेते हुए, हम पाते हैं कि यह फिर से एक ऐसी परिस्थिति है जो अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री के. एस. महादेवन के तर्क से पर्याप्त रूप से संबंधित है कि एक प्रमाणित प्रति की आवश्यकता नहीं हो सकती है।जैसा कि उच्च न्यायालय

द्वारा देखा गया है, परिवार न्यायालय अधिनियम के तहत आवश्यकता के अनुसार एक मुफ्त प्रति प्रदान की जा सकती है लेकिन ए

एच.

515

एन. राजेंद्रन बनाम एस. वल्ली [के. एम. जोसेफ, जे.] ए.

यह अभिनिर्धारित करने से बहुत दूर है कि एक प्रमाणित प्रति के बिना एक अपील की जा सकती है।इस संबंध में, हम फिर से एक नियम द्वारा मजबूत हुए हैं जो परिवार न्यायालय अधिनियम की धारा 21 के तहत बनाया गया है। मद्रास उच्च न्यायालय ने पारिवारिक न्यायालय (प्रक्रिया) नियम, 1996 का नियम 52 तैयार किया है जो इस प्रकार हैः

“अपील के साथ दायर किए जाने वाले निर्णय या आदेश की प्रति-अधिनियम की धारा 19 (1) के तहत प्रत्येक अपील के साथ उस न्यायालय द्वारा सत्य प्रतिलिपि होने के लिए प्रमाणित एक प्रति होगी जिसने निर्णय पारित किया था।”23. यह स्पष्ट रूप से अपीलार्थी के इस तर्क को पीछे हटाने के लिए पर्याप्त होगा कि एक अपील तीस दिनों के भीतर रखी जा सकती है, भले ही वह प्रमाणित प्रति के अभाव में हो।अपीलार्थी के लिए विद्वान अधिवक्ता के तर्कों पर आगे आते हुए कि धारा 19 सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों को ओवरराइड करती है और निर्णय की प्रमाणित प्रति की कोई आवश्यकता नहीं हो सकती है, हम इस तर्क को मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा उसी अधिनियम की उक्त धारा 21, अर्थात् परिवार न्यायालय अधिनियम के तहत बनाए गए नियम 52 के संबंध में स्पष्ट रूप से असमर्थनीय पाते हैं। धारा 19 में गैर-अस्थाई खंड का वास्तव में एक अलग उद्देश्य और दायरा है और इसका उद्देश्य अपील को बनाए रखने के लिए कानून में मौजूद सभी आवश्यकताओं को समाप्त करना नहीं था।

बी.

सी.

डी.

24. समान रूप से, अधिनियम की धारा 19 (3) के आधार पर अपीलार्थी का तर्क बिना किसी सार के है। इसने सीमा अधिनियम की धारा 29 (2) के अर्थ के भीतर एक विशेष कानून का गठन किया। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि परिवार न्यायालय अधिनियम स्वयं इस भारी अहसास पर आधारित था कि एक विशेष संस्थान जिसे पक्षों के बीच सुलह के प्रयासों का तेजी से सहारा लेना चाहिए, की स्थापना की जानी चाहिए।यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि अधिनियम की घोषणा के साथ भी, जब तक कि एक परिवार न्यायालय की स्थापना नहीं की जाती है, तब तक उन न्यायालयों का अधिकार क्षेत्र बना रहेगा जो पहले प्रावधानों से निपट रहे थे।परिवार न्यायालय की स्थापना और अधिनियम की धारा 7 के तहत अधिकारिता का प्रयोग

करने के साथ, इस न्यायालय का विचार है कि परिवार न्यायालय अधिनियम को संज्ञानात्मक अधिनियमों के साथ पढ़ा जाना चाहिए।दूसरे शब्दों में, परिवार न्यायालय अधिनियम एक स्वतंत्र अधिनियम नहीं है। यह हिंदू विवाह अधिनियम जैसे अधिनियमों से निर्वाह प्राप्त करता है। यही कारण है कि उदाहरण के लिए, भारत में परिवार न्यायालय की स्थापना के बाद हिंदू विवाह अधिनियम के अर्थ के भीतर एक याचिका पर हिंदू विवाह अधिनियम के तहत प्रदान किए गए आधारों पर परिवार न्यायालय द्वारा विचार किया जाना है। वास्तव में, पारिवारिक न्यायालय अधिनियम की धारा 7 के केवल अवलोकन से पता चलता है कि यह मुकदमों और कार्यवाही के बारे में बात करता है।इसलिए, परिवार न्यायालय अधिनियम की धारा 7 को धारा 29 के साथ पढ़ें।

ई.

एफ.

जी.

एच.

सीमा अधिनियम, हमारे इस निष्कर्ष को भी मजबूत करता है कि धारा 29 (3) के अर्थ के भीतर 'कार्यवाही' शब्द को मूल कार्यवाही तक ही सीमित रखा जाना है।

25. हम धारा 20 के आधार पर विवाद में भी कोई योग्यता नहीं पाते हैं।धारा 20 परिवार न्यायालय अधिनियम को किसी भी अन्य अधिनियम के साथ असंगत होने के बावजूद प्रबल प्रभाव देती है। यह सच है कि इसका उद्देश्य अन्य प्रावधानों पर भी भारी प्रभाव डालना है। लेकिन धारा 20 को लागू करने और सीमा अधिनियम की धारा 12 को खारिज करने के लिए, अपीलार्थी को सीमा अधिनियम की धारा 29 (2) के आवेदन को समाप्त करने में सफल होना चाहिए। एक बार धारा 29 (2) लागू होने के बाद, परिवार न्यायालय अधिनियम एक विशेष अधिनियम होगा जो धारा 19 में अनुध्यात सीमा की विशेष अवधि के लिए प्रावधान करेगा, लेकिन सीमा अधिनियम की धारा 4 से 24 के प्रावधानों को लागू करेगा। सीमा अधिनियम की धारा 12 संभावित अपीलार्थी के लिए वैध रूप से उपलब्ध है।यह न्याय के हित के लिए भी अनुकूल है।वास्तव में, यह समझ से परे है कि कैसे एक ओर, कानून नियमों के नियम 52 के माध्यम से आदेश देता है कि एक प्रमाणित प्रति एक अपील के साथ होनी चाहिए, और फिर भी विवाह को भंग करने की घोषणा करने वाला निर्णय वादी को फिरौती के लिए पकड़ सकता है, जब उसे प्रमाणित प्रति के बिना अपील दायर करने का कोई अधिकार नहीं है, और फिर भी मूल

न्यायालय के समक्ष एक सफल पक्ष को सीमा अधिनियम के तहत अवधि समाप्त होने से पहले पुनर्विवाह करने के लिए स्वतंत्र छोड़ दिया जाता है।

बी.

सी.

डी.

ई.

26. इस प्रकार परिवार न्यायालय अधिनियम की धारा 19 के साथ सीमा अधिनियम की धारा 29 (2) सहपठित धारा 12 में कुछ भी असंगत नहीं है।

इसलिए, हम पाते हैं कि अपीलार्थी के इस तर्क में कोई योग्यता नहीं है कि धारा 20 के प्रावधान सीमा अधिनियम की धारा 12 के प्रावधानों को ओवरराइड करेंगे जिससे प्रत्यर्थी द्वारा दायर अपील समय से परे हो जाएगी।

एफ.

27. अपीलार्थी , श्री K.S.Mahadevan के विद्वान अधिवक्ता द्वारा संबोधित आगे का तर्क, कि प्रत्यर्थी ने 09.09.2004 पर अपील दायर की और इसलिए यह एक अपील नहीं थी जिसे हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 15 के अर्थ के भीतर प्रस्तुत किया गया था, बिना किसी योग्यता के है।वास्तव में, सीमा अधिनियम की धारा 3 अपील के संदर्भ में "वरीयता" शब्द का उपयोग करती है।धारा 15 में निस्संदेह "प्रस्तुत" शब्द का उपयोग किया गया है।धारा 15 का उद्देश्य असफल पक्ष के उस कार्यवाही को चुनौती देने के अधिकार पर एक समय सीमा निर्धारित करना है जिसके द्वारा विवाह को भंग घोषित किया गया है।लता कामत (ऊपर) में हम देखते हैं कि यह ए

जी.

एच.

न्यायालय ने स्पष्ट किया है कि हालांकि धारा 15 में "भंग" शब्द का उपयोग किया गया है, लेकिन इसकी व्याख्या उन मामलों में भी लागू होती है जहां न्याय के हितों को ध्यान में रखते हुए विवाह को अमान्य घोषित किया जाता है।इस प्रकार, विधानमंडल का इरादा विघटन के लिए डिक्री को प्रभावी बनाना था, यदि असफल पक्ष समय के भीतर अपीलीय न्यायालय में नहीं जाता है।अपीलार्थी के लिए विद्वान अधिवक्ता का तर्क कि अपीलार्थी को न केवल अपील दायर

करनी चाहिए, या अपील को प्राथमिकता देनी चाहिए या अपील प्रस्तुत करनी चाहिए, बल्कि उसे यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि अपील उच्च न्यायालय के न्यायिक पक्ष में आती है, स्पष्ट रूप से बिना किसी आधार के है।इसलिए, हम पाते हैं कि 09.09.2004 पर दायर की जाने वाली अपील को अधिनियम की धारा 15 के अर्थ के भीतर प्रस्तुत किया गया माना जाना चाहिए। चर्चा का परिणाम यह है कि अपीलार्थी ने गुण-दोष के आधार पर निष्कर्षों को पलटने का मामला नहीं बनाया है।समान रूप से, जैसा कि अपीलार्थी हमें यह अभिनिर्धारित करने के लिए राजी करने में विफल रहा कि अपील पारिवारिक न्यायालय अधिनियम की धारा 19 में निर्धारित अवधि के भीतर दायर नहीं की गई थी या कि अपील समय के भीतर धारा 15 की अवधि के दौरान प्रस्तुत नहीं की गई थी, दूसरा विवाह जिस पर अपीलार्थी द्वारा भरोसा किया गया है, स्पष्ट रूप से हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 15 के अधिदेश का उल्लंघन करते हुए हुआ था और हमें यह अभिनिर्धारित करने में कोई संकोच नहीं है कि उच्च न्यायालय अपने निष्कर्षों में पूरी तरह से सही था।

बी.

सी.

डी.

28. हालाँकि, दुर्भाग्य से यह सवाल बना हुआ है कि क्या इस मामले के तथ्यों में इस न्यायालय द्वारा की गई जाँच का यह अंत होना चाहिए।पक्षकार विवाद से परे, दूसरे शब्दों में, 22 से अधिक वर्षों से अलग-अलग रह रहे हैं।क्या हमें उस विवादित फैसले की पुष्टि करते हुए संतुष्ट रहना चाहिए जो हमें निंदनीय लगता है?क्या हमें अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता की याचिका को सुनना चाहिए कि निर्णय में हस्तक्षेप करने से इनकार करने से ऐसी स्थिति पैदा नहीं होनी चाहिए जहां पक्ष कभी भी पति और पत्नी के रूप में सह-वास नहीं कर सकें और इसके अलावा, तीसरे पक्ष ने दृश्य पर दूसरी पत्नी और बेटे के रूप में अपनी उपस्थिति दर्ज कराई है जो 25.02.2004 पर उसके लिए पैदा हुए हैं और फिर भी विवाह बरकरार है।अपीलार्थी को दूसरी शादी से एक बेटा पैदा हुआ है जो निस्संदेह धारा 15 का उल्लंघन करते हुए अनुबंधित किया गया है।

ई.

एफ.

प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह बताया गया है कि परिवार न्यायालय द्वारा विघटन की घोषणा से पहले ही पुत्र का जन्म अपीलार्थी के साथ दूसरी शादी में हुआ था।

जी.

29. संविधान का अनुच्छेद 142 निस्संदेह इस न्यायालय को आदेश पारित करने की शक्ति प्रदान करता है जो पक्षों को पूर्ण न्याय प्रदान करेगा।जो बात दिमाग में आती है वह है अपरिवर्तनीय की अवधारणा।

एच.

विवाह का टूटना।निस्संदेह, यद्यपि इस संबंध में विधि आयोग की रिपोर्टों में कानून में परिवर्तन की सिफारिश की गई है, आज तक कानून एक आधार के रूप में विवाह के अपरिवर्तनीय टूटने का प्रावधान नहीं करता है।हालाँकि, इस न्यायालय ने कई मौकों पर अपनी शक्ति का प्रयोग किया है और अनुच्छेद 142 के आधार पर विवाह के अपरिवर्तनीय टूटने के आधार पर विवाह को भंग करने की अनुमति दी है।इस संबंध में, प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने बताया कि यह अनुच्छेद 142 के तहत शक्ति का प्रयोग करने का मामला नहीं है।उन्होंने इस निवेदन को संबोधित करते हुए हमें अपीलार्थी के पूरे आचरण की याद दिलाई।वह प्रस्तुत करेगा कि प्रत्यर्थी पूरी तरह से दोषरहित है।वह हमेशा तैयार और इच्छुक थी।उच्च न्यायालय द्वारा पाए गए निष्कर्षों की पुष्टि होने पर, इस न्यायालय के लिए अनुच्छेद 142 के तहत शक्ति का प्रयोग करने का कोई अवसर उत्पन्न नहीं होता है।हम इस निवेदन को एक प्रारंभिक टिप्पणी के रूप में दर्ज करते हैं ताकि यह संकेत दिया जा सके कि यह ऐसा मामला नहीं है जहां दोनों पक्ष विवाह के अपरिवर्तनीय टूटने के माध्यम से विघटन के लिए सहमत हैं।लेकिन यह तब हमें इस सवाल की ओर ले जाता है कि क्या अपरिवर्तनीय टूटने के आधार पर विवाह को भंग करने का आदेश देने के लिए पक्षों की सहमति आवश्यक है।यह फिर से, रेस इंटीग्रा नहीं है।हम देख सकते हैं कि इस न्यायालय ने कई निर्णयों में इसी पहलू पर चर्चा की है।आर. श्रीनिवास कुमार बनाम आर. शमिता 5 में रिपोर्ट किया गया निर्णय इस प्रकार हैः

बी.

सी.

डी.

“7. अब जहाँ तक प्रत्यर्थी पत्नी की ओर से यह निवेदन है कि जब तक दोनों पक्षों की सहमति नहीं है, तब तक भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए भी विवाह के अपरिवर्तनीय टूटने के आधार पर विवाह को भंग नहीं किया जा सकता है, उपरोक्त में कोई सार नहीं है।यदि विवाह के दोनों पक्ष स्थायी रूप से अलग होने और/या तलाक के लिए सहमति देते हैं, तो निश्चित रूप से दोनों पक्ष आपसी सहमति से तलाक की डिक्री के लिए सक्षम

न्यायालय का रुख कर सकते हैं।केवल ऐसे मामले में जहां एक पक्ष सहमत नहीं होता है और सहमति नहीं देता है, केवल तभी मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए पक्षों के बीच पर्याप्त न्याय करने के लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत शक्तियों का उपयोग करने की आवश्यकता होती है।हालाँकि, साथ ही, पत्नी के हित को आर्थिक रूप से संरक्षित करने की भी आवश्यकता है ताकि उसे भविष्य में आर्थिक रूप से पीड़ित न होना पड़े और उसे दूसरों पर निर्भर न रहना पड़े।"

ई.

एफ.

जी.

एच.

5 (2019) 9 एससीसी 409 ए

519

एन. राजेंद्रन बनाम एस. वल्ली [के. एम. जोसेफ, जे.] ए.

30. हम इस न्यायालय के निर्णय पर भी ध्यान दे सकते हैं जिसमें बताया गया है -

मुनीश कक्कड़ बनाम निधि कक्कड़ 6 जो इस प्रकार हैः

"18. इसमें कोई संदेह नहीं है कि प्रत्यर्थी की कोई सहमति नहीं है।लेकिन वास्तविक रूप से, पक्षकारों की कोई इच्छा नहीं है, जिसमें प्रत्यर्थी भी शामिल है कि वे एक साथ रहें।एक-दूसरे के खिलाफ केवल कड़वी यादें और गुस्सा है।यह चिंता प्रत्यर्थी के मामले में बढ़ गई है कि किसी तरह अपीलार्थी को तलाक की डिक्री प्राप्त करने और "अपना जीवन जीने" की अनुमति नहीं दी जाए, यह भूलकर कि दोनों पक्ष अपना जीवन बेहतर तरीके से, अलग-अलग जीने में सक्षम होंगे, क्योंकि दोनों पक्ष कानूनी कार्यवाही के प्रति जुनून से पीड़ित हैं, जैसा कि हमारे सामने प्रस्तुतियों से पता चलता है।"

बी.

सी.

31. हम इस न्यायालय के निर्णय पर भी ध्यान दे सकते हैं जिसमें बताया गया है -

शिवशंकरन बनाम संथिमीनल 7 जो इस प्रकार हैः

"19. इस प्रकार, हम एक ऐसी शादी का सामना कर रहे हैं जो पहले दिन से कभी नहीं हुई। शादी कभी पूरी नहीं हुई थी और दोनों पक्ष शादी की तारीख से लगभग 20 वर्षों से अलग रह रहे हैं।अपीलार्थी ने शादी के 6 साल बाद पुनर्विवाह किया, जिसमें से 5 साल विचारण

न्यायालय की कार्यवाही में बिताए गए।तलाक का फरमान जारी होने के तुरंत बाद शादी हुई। मध्यस्थता के सभी प्रयास विफल रहे हैं।

डी.

20. जिस कानूनी स्थिति का हमने ऊपर उल्लेख किया है, उसे ध्यान में रखते हुए, प्रत्यर्थी के ये निरंतर कार्य क्रूरता के बराबर होंगे, भले ही वे याचिका की स्थापना से पहले एक कारण के रूप में उत्पन्न नहीं हुए थे, जैसा कि विचारण न्यायालय द्वारा पाया गया था।यह आचरण वैवाहिक एकता के विघटन और इस प्रकार विवाह के विघटन को दर्शाता है।वास्तव में, कोई प्रारंभिक एकीकरण नहीं था जो बाद में विघटन की अनुमति देगा।यह तथ्य कि लगातार आरोप और मुकदमेबाजी की कार्यवाही हो रही है और जो क्रूरता के बराबर हो सकती है, इस न्यायालय द्वारा ध्यान में रखा गया एक पहलू है।विवाह अपनी शुरुआत से नहीं हुआ है और विचारण न्यायालय में 5 साल बिताए जाने के बाद, यह स्वीकार करना मुश्किल है कि तलाक की डिक्री के तुरंत बाद, 6 दिनों के भीतर, विवाह की प्रारंभिक शुरुआत के 6 साल बाद भी, ऐसा आचरण है जो अपीलार्थी के खिलाफ आयोजित किया जा सकता है।

ई.

एफ.

जी.

6 (2020) 14 एस. सी. सी. 657

7 2021 एससीसी ऑनलाइन एससी 702

एच.

21. उपरोक्त सभी तथ्यों के संदर्भ में, यह एक ऐसा मामला है जिसमें विवाह के अपरिवर्तनीय टूटने का आधार और बाद के तथ्यों के कारण क्रूरता का आधार दोनों अपीलार्थी के पक्ष में तलाक की डिक्री देने के पक्ष में होंगे।22. इस प्रकार, हमारा विचार है कि पक्षकारों के बीच विवाह को भंग करने वाली तलाक की डिक्री न केवल विवाह के अपरिवर्तनीय टूटने के कारण भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत शक्तियों के प्रयोग में, बल्कि विभिन्न चरणों में न्यायिक कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान प्रत्यर्थी के बाद के आचरण के आलोक में अधिनियम की धारा 13 (1) (i-a) के तहत क्रूरता के कारण भी पारित की जानी चाहिए।”

बी.

सी.

32. यह पता चलने के बाद कि विवाह को भंग घोषित करने के लिए पक्षों की सहमति आवश्यक नहीं है, हम तथ्यों से बेखबर नहीं हो सकते क्योंकि वे वास्तव में मौजूद हैं।एक शादी हुई है जो 31.10.2004 पर हुई थी।उक्त विवाह में एक बच्चे का जन्म होता है।इसमें कोई संदेह नहीं है कि धारा 15 का उल्लंघन होने के कारण, यह एक उचित परिपूर्ति बन जाती है, लेकिन साथ ही हम अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के पति और पत्नी के रूप में सहवास करने की किसी भी संभावना को उचित रूप से नहीं समझते हैं।विवाह में जो कुछ भी जीवन था, वह समय के साथ समाप्त हो गया है, नई पार्टियों की उपस्थिति और पार्टियों के बीच किसी भी बंधन का गायब होना। अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच मेल-मिलाप की थोड़ी सी भी संभावना उन कारणों से मौजूद नहीं है जो पूरी तरह से अपीलार्थी के कार्यों के कारण हैं और जिनके लिए प्रत्यर्थी को दोषी नहीं ठहराया जा सकता है।अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच विवाह समाप्त हो गया है।इसे वापस न आने के बिंदु के रूप में वर्णित किया जा सकता है।अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के किसी भी प्रकार के उचित संबंध को एक साथ जोड़ने की कोई संभावना नहीं है क्योंकि पक्षों के बीच संबंध सुधार से परे टूट गया है और इस मामले के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, हम सोचेंगे कि यह न्याय के हित में होगा और पक्षों के साथ पूर्ण न्याय करने के लिए कि हमें अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच विवाह को भंग करने का आदेश पारित करना चाहिए।

डी.

ई.

एफ.

33. हम यह स्पष्ट करते हैं कि हमारा यह निर्णय अपीलार्थी के आचरण के हमारे अनुमोदन पर आधारित नहीं है और न ही यह प्रत्यर्थी के आचरण पर निर्णय में बैठने पर आधारित है।दूसरे शब्दों में, हम पाते हैं कि प्रत्यर्थी मामले में निर्दोष है, लेकिन तथ्य जो सामने आए हैं और जो घटनाक्रम हुए हैं, वे हमारे लिए विवाह के विघटन को न्याय के हित में सबसे अच्छा रास्ता मानने के लिए अपरिहार्य बनाते हैं।

जी.

एच.

ए.

34. तदनुसार, जबकि हम उच्च न्यायालय के फैसले की पुष्टि करते हैं और प्रत्यर्थी द्वारा क्रूरता के आधार पर विघटन की डिक्री देने से इनकार करते हैं, हम संविधान के अनुच्छेद 142 के

तहत अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच विवाह को भंग घोषित करते हैं।यह इस शर्त पर होगा कि अपीलार्थी आज से आठ सप्ताह की अवधि के भीतर मांग मसौदे के माध्यम से प्रत्यर्थी को Rs.20,000,00/- (बीस लाख रुपये) की राशि का भुगतान करेगा।हम आगे यह स्पष्ट करते हैं कि यह संपत्ति अधिकारों के संबंध में कानून के तहत अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच विवाह में पैदा हुए बेटे के लिए उपलब्ध सभी अधिकारों के प्रति पूर्वाग्रह के बिना होगा।जब तक उपरोक्त राशि का भुगतान नहीं किया जाता है, तब तक अपीलार्थी प्रत्यर्थी को प्रति माह Rs.7000 का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी रहेगा।

बी.

सी.

35. अपील का निपटारा उपरोक्त तरीके से किया जाता है।

अंकित ज्ञान और अमरेंद्र कुमार

अपील का निपटारा किया गया।

(सहायकः इराम जान, एलसीआरए)

डी.

ई.

एफ.

जी.

एच.